

बौद्ध दर्शन

बौद्ध दर्शन से अभिप्राय उस दर्शन से है जो भगवान बुद्ध के निर्वाण के बाद बौद्ध धर्म के विभिन्न सम्प्रदायों द्वारा विकसित किया गया और बाद में पूरे एशिया में उसका प्रसार हुआ। 'दुःख से मुक्ति' बौद्ध धर्म का सदा से मुख्य ध्येय रहा है। कर्म, ध्यान एवं प्रज्ञा इसके साधन रहे हैं।

बुद्ध के उपदेश तीन पिठकों में संकलित हैं। ये सुत्त पिठक, विनय पिठक और अभिधम्म पिठक कहलाते हैं। ये पिठक बौद्ध धर्म के आगम हैं। क्रियाशील सत्य की धारणा बौद्ध मत की मौलिक विशेषता है। उपनिषदों का ब्रह्म अचल और अपरिवर्तनशील है। बुद्ध के अनुसार परिवर्तन ही सत्य है। पश्चिमी दर्शन में हैराक्लाइटस और बर्गसाँ ने भी परिवर्तन को सत्य माना। इस परिवर्तन का कोई अपरिवर्तनीय आधार भी नहीं है। बाह्य और आंतरिक जगत् में कोई ध्रुव सत्य नहीं है। बाह्य पदार्थ "स्वलक्षणों" के संघात हैं। आत्मा भी मनोभावों और विज्ञानों की धारा है। इस प्रकार बौद्धमत में उपनिषदों के आत्मवाद का खंडन करके "अनात्मवाद" की स्थापना की गई है। फिर भी बौद्धमत में कर्म और पुनर्जन्म मान्य हैं। आत्मा का न मानने पर भी बौद्धधर्म करुणा से ओतप्रोत हैं। दुःख से द्रवित होकर ही बुद्ध ने सन्यास लिया और दुःख के निरोध का उपाय खोजा। अविद्या, तृष्णा आदि में दुःख का कारण खोजकर उन्होंने इनके उच्छेद को निर्वाण का मार्ग बताया।

अनात्मवादी होने के कारण बौद्ध धर्म का वेदांत से विरोध हुआ। इस विरोध का फल यह हुआ कि बौद्ध धर्म को भारत से निर्वासित होना पड़ा। किन्तु एशिया के पूर्वी देशों में उसका

प्रचार हुआ। बुद्ध के अनुयायियों में मतभेद के कारण कई संप्रदाय बन गए। जैन संप्रदाय वेदांत के समान ध्यानवादी है। इसका चीन में प्रचार है।

सिद्धांतभेद के अनुसार बौद्ध परंपरा में चार दर्शन प्रसिद्ध हैं। इनमें वैभाषिक और सौत्रांतिक मत हीनयान परंपरा में हैं। यह दक्षिणी बौद्धमत हैं। इसका प्रचार भी लंका में है। योगाचार और माध्यमिक मत महायान परंपरा में हैं। यह उत्तरी बौद्धमत है। इन चारों दर्शनों का उदय ईसा की आरंभिक शताब्दियों में हुआ। इसी समय वैदिक परंपरा में षड्दर्शनों का उदय हुआ। इस प्रकार भारतीय परंपरा में दर्शन संप्रदायों का आविर्भाव लगभग एक ही साथ हुआ है तथा उनका विकास परस्पर विरोध के द्वारा हुआ है। पश्चिमी दर्शनों की भाँति ये दर्शन पूर्वापर क्रम में उदित नहीं हुए हैं।

वसुबंधु (400 ई.), कुमारलात (200 ई.) मैत्रेय (300 ई.) और नागार्जुन (200 ई.) इन दर्शनों के प्रमुख आचार्य थे। वैभाषिक मत बाह्य वस्तुओं की सत्ता तथा स्वलक्षणों के रूप में उनका प्रत्यक्ष मानता है। अतः उसे बाह्य प्रत्यक्षवाद अथवा "सर्वास्तित्ववाद" कहते हैं। सौत्रांतिक मत के अनुसार पदार्थों का प्रत्यक्ष नहीं, अनुमान होता है। अतः उसे बाह्यानुमेयवाद कहते हैं। योगाचार मत के अनुसार बाह्य पदार्थों की सत्ता नहीं। हमें जो कुछ दिखाई देता है वह विज्ञान मात्र है। योगाचार मत विज्ञानवाद कहलाता है। माध्यमिक मत के अनुसार विज्ञान भी सत्य नहीं है। सब कुछ शून्य है। शून्य का अर्थ निरस्वभाव, निःस्वरूप अथवा अनिर्वचनीय है। शून्यवाद का यह शून्य वेदांत के ब्रह्म के बहुत निकट आ जाता है।

